International Journal of Multidisciplinary Research and Development 2014; 1(5): 213-216

International Journal of Multidisciplinary Research and Development

IJMRD 2014; 1(5): 213-216
www.allsubjectjournal.com
Received: 09-10-2014
Accepted: 29-10-2014
e-ISSN: 2349-4182
p-ISSN: 2349-5979
Impact Factor: 3.762

डॉ. भगत सिंह
एसोशिएट प्रोपेफसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, कुरुक्षेत्रा विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्रा।

Correspondence:
डॉ. भगत सिंह
एसोशिएट प्रोपेफसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, कुरुक्षेत्रा विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्रा।

प्राचीन भारतीय संस्कृत ग्रन्थों में विज्ञान एवं तकनीकः एक विहंगम दृष्टि

डॉ. भगत सिंह

भारत में वैदिककाल से ही ज्ञान–विज्ञान की परम्परा का प्रारम्भ हुआ। वेद संहिताओं से प्रेरणा प्राप्त कर वैदिक काल के ऋृषियों ने अनेक शास्त्रों, विज्ञानों एवं तकनीकी विषयों का विकास किया। वैदिक मुनियों के पुरूषार्थ प्रेरक यथार्थवाद ने एक ऐसे समाज की परम्परा स्थापित की जिसके आधार पर आज का विकसित समाज खड़ा हो सका। 600 ई.पू. तक भारत ने संसार के सभी प्रगतिशील देशों का नेतृत्व किया और परस्पर मिल जुलकर ज्ञान के समस्त अंगों व उपभागों का विकास भी किया। यूनान, मिस्त्र, अरब, ईरान, चीन व भारत सभी का पारस्परिक सहयोग इस विकास में सहायक हुआ।[1] विज्ञान का विकास जिस प्रकार आज सर्वव्यापी है, उसी प्रकार 600 ई. पूर्व भी था। वैदिक संहिताओं में मंत्रों के प्रारम्भ में जिन ऋषियों की सूची हमें प्राप्त है, उससे ज्ञात होता है कि उन ऋचाओं के मर्म और रहस्यों का उन ऋषियों ने सर्वप्रथम उद्घाटन किया था। मुनियों द्वारा सर्वप्रथम अग्नि का मंथन किया गया तथा यज्ञों की परम्परा शुरू की गई थीं अग्नि के उपयोग के साथ–साथ अनेक अविष्कारों एवं अनुसन्धानों का प्रारम्भ हुआ। भारत में प्राचीन काल के समय इन्हीं यज्ञस्थलियों में बैठकर मनीषियों ने अनेक विज्ञानों की नीव डाली। ये यज्ञस्थलियाँ हमारी प्राथमिक कार्यशालायें व अनुसंधान–शालायें बनी, जिनके माध्यम से ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में हम उन्नति प्राप्त कर सके।[2]

विज्ञान एक ऐसा विषय है जिसमें सभी मूलतत्त्व जैसे–पृथ्वी, आकाश, वायु, जल तथा पर्यावरण से सम्बन्धित जानकारी मिलती है। यह जानकारी वैज्ञानिकों द्वारा किए गए प्रयोगों और अनुसनधान के आधार पर उपलब्ध होती है। विज्ञान की तीन प्रमुख शाखाएं है जिनमें भौतिक शास्त्र, रसायन विज्ञान तथा जीव विज्ञान प्रमुख है इसके अतिरिक्त विज्ञान के अन्तर्गत कृषि विज्ञान, ज्योतिष, खगोल, वनस्पति एवं चिकित्सा विज्ञान का भी महत्त्वपूर्ण रूप से अध्ययन किया जाता है।[3] इन वैज्ञानिक पद्धतियों के मध्य पर्याप्त साम्यता भी रहती है लेकिन किसी विज्ञान द्वारा अपनाई गई विषय वस्तु अलग होती है और इसीलिए उनके निष्कर्षों की निश्चितता सत्यता एवं अन्तिम प्रकृति में अन्तर होता है। प्रत्येक विज्ञान में कुछ सीमाकारी तत्त्व होते हैं। सर्वाधिक निश्चित विज्ञानों में भी कुछ त्रुटि का अंदेशा बना ही रहता है।[4]

यह सत्य है कि वैदिक काल में विज्ञान एक आत्मीय गतिविधि के रूप में उभरा परन्तु यह पाया जाता है कि ज्ञान के क्षेत्र में लोगों की रूचि हमेशा विशेष कारणों से ही निर्धारित होती है। पृथ्वी पर मानव का प्रार्दुभाव कब हुआ, यह कहना कठिन है किन्तु इतना निश्चित है कि मानव जाति का इतिहास लाखों वर्ष पुराना है। मनुष्य द्वारा सर्वप्रथम गणित का प्रयोग कब किया गया यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता, यद्यपि यह निश्चित है कि मानव जाति में अंकों का प्रयोग अति प्राचीन है। मनुष्य द्वारा सर्वप्रथम गणना कब की गई यह नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना निश्चित है कि गिनती सिखने के काफी समय पश्चात् ही मानव द्वारा परिकलन किया गया होगा। भारत में गिनती के लिए प्राचीन शब्द 'गणन' है और इसी शब्द गणित निकला है। गणित का अर्थ है 'गणन किया हुआ' अर्थात् गिना हुआ। अंकगणित का मौलिक अर्थ है अंक–विज्ञान। इस विषय में अंकों के गुणों का अध्ययन किया जाता है। किन्तु आधुनिक समय में अंकों के गुणों का विषय इतना विस्तृत एवं विकसित हो गया है कि अब अंक सिद्धांत एक स्वतन्त्र विषय बन चुका है।[5]

वैदिक साहित्य में गणित शब्द का उल्लेख मिलता है उस समय शिक्षा के मूल तत्त्व लेखा, रूप व गणना थे जिनके माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। प्रथम सदी के आरम्भ में गणित में बहुत विकास हुआ तथा उसमें कुछ नए सिद्धांत सम्मिलित हुए जैसे रज्जू (रोप ज्यमिति) परिक्रमा, व्यवहार (निश्चय) रस्सी (तीन का नियम) आदि। गणित का इतिहास भारत में उतना ही प्राचीन है जितनी भारतीय सभ्यता। प्राचीन काल में नापने तथा संगणक करने की प्रणाली को अपनाया गया जो आज भी विद्यमान है। ईसा की प्रथम शताब्दी में भारतीय गणित ने नए आयाम प्राप्त किए। मध्य युग में अरब व प्रशिया भारतीय गणित साहित्य के विकास के साक्षी है।[6]

प्राचीन समय में माप एवं संगणक का सिन्धु सभ्यता के निर्माताओं द्वारा प्रयोग व्यवस्थित रूप से किया गया है, जिसकी पुष्टी विभिन्न पुरास्थलों पर किए गए उत्खननों के माध्यम से होती है। माप एवं गणना के बिना उनकी नगर योजना, धातुविक प्रवीणता तथा उनकी नागरिकता के विभिन्न पहलूओं को समझना असंभव था।[7] मानव सभ्यता के विकास के प्रथम चरण में ही भारतीय दार्शनिकों ने

ब्राह्मण्ड की मूलभूत सममिती एवं एकता की परिकल्पना कर यह अनुभव किया कि इस संरचना का गणितिय आधार है जिसके कारण इसके किसी भी प्रदत परक्रम के शुद्धता सीमा तक विश्लेषण हेतु गणितय नियमों का पालन आवश्यक है। वेदांग ज्योतिष के अनुसार जिस प्रकार मोर के लिए उसके पंखों पर बना चन्द्रमा तथा नाग के लिए उसकी मणि सर्वश्रेष्ठ होती है उसी प्रकार सभी वेदों एवं शास्त्रों के लिए सभी प्रकार के विज्ञानों में गणित का स्थान सर्वश्रेष्ठ है।[8]

भारत में प्राचीन काल से ही अंकों को प्रकट करने के लिए एक प्रणाली को बनाया गया। ये अंक 0 से 9 तक थे जो शारीरिक वास्तविकताओं से सम्बन्ध रखते थे।[9] जैसे एक चांद को प्रकट करता था, दो आखों को, तीन पद्धार्थों के गुण ऊर्जा व बुद्धि को तथा 0 के द्वारा आकाश के खालीपन को दर्शाया जाता था। वैदिक संस्कृति का एक बहुत बड़ा योगदान भारतीय गणित विज्ञान को दशमलव प्रणाली तथा 0 का चिन्ह है। भारत को प्राचीन काल से 0 सिद्धांत का अविष्कारक माना जाता है, जो गणित के बड़े अंकों को प्रकट करने का शक्तिशाली माध्यम है। ब्रह्मगुप्त तथा अन्य गणितज्ञों द्वारा भी 500 ई. के आस–पास जोड, घटा तथा गुणा के साथ जीरों का प्रयोग किया। जीरों का अविष्कार दशमलव प्रणाली की धारणा के लिए एक महत्त्वपूर्ण कार्य है, भारतीय दार्शनिकों द्वारा 3000 वर्ष पूर्व यह बात स्वीकार की गई।

प्राचीन भारत में 476 ई. में एक महान् खगोलज्ञ एवं गणितज्ञ आर्यभट्ट हुए जो वीजगणित एवं ज्योतिष के प्रसिद्ध विद्वान थे। उन्होंने गणितिय क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जिसके माध्यम से विभिन्न रहस्यों को सुलझाया गया।[10] उन्होंने चार पादों की रचना की तथा उन्हें अलग–अलग नाम दिए जैसे गीतिका पाद, गणित पाद, गोलपाद आदि। आर्यभट्ट ने ज्योतिष में भी अनेक चमत्कारी सूत्रों को प्रतिपादित किया था।[11] भारत के गणितज्ञों एवं ज्योतिर्विदों में भाष्कर का स्थान बहुत ऊँचा है। उनके द्वारा रचित ग्रन्थों में लीलावती, सिद्धान्त सिरोमणी, करणकुतुहल एवं बीजगणित है। भास्कर ने अपने बीजगणित में महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की है जिसमें संख्याओं की करणियों, कुट्टक की गणना, वर्गों के स्वरूप उच्च श्रेणी के समीकरणों एवं उनके समाधानों की चर्चा विस्तार से की गई है।[12] इसके अतिरिक्त अन्य महान् गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ वराहमिहिर हुए है जिनके प्रसिद्ध ग्रन्थ पंचसिदान्तिका का प्राचीन ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। बौधायन ने तथाकथित पायथागोरस प्रमेय को स्वतन्त्र रूप से खोज। जिसके अनुसार किसी आयत के विकर्ण द्वारा व्युत्पन्न क्षेत्रफल उसकी लम्बाई एवं चौड़ाई द्वारा पृथक–पृथक व्युत्पन्न क्षेत्रफलों के योग के तुल्य है।

प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान भी अत्यन्त समुन्नत अवस्था में था, जिसके साक्ष्य वेदों में निहित है। प्राचीन काल में भारतीय रसायन विज्ञान अरब व यूनान से होते हुए पश्चिमी देशों में पहुंचा। संस्कृत में रसायन संबंधी वृहत साहित्य उपलब्ध है, जिनमें खनिज, अयस्क, धातु कर्म, मिश्र धातु विरचन, उत्प्रेरक, सैदान्तिक एवं प्रयोगिक रसायन तथा उनमें प्रयोग होने वाले उपकरणों आदि का समग्र विवरण प्राप्त होता है।

रसायन शास्त्र का मूल आधार परमाणुओं की प्रकृति का सही ज्ञान एवं उनमें परस्पर बंधता का गुण है। परमाणु संबंधी आधुनिक संकल्पना के आदि पुरूष डाल्टन माने जाते हैं परन्तु भारत में उनसे बहुत पहले 600 ई.पू. में कणाद मुनि ने परमाणुओं के सम्बन्ध में जिन मान्यताओं का प्रतिपादन किया वे आश्चर्य रूप से डाल्टन की संकल्पना से मेल खाती है। कणाद ने न केवल परमाणुओं को तत्त्वों की लघुतम ईकाई माना है बल्कि विभिन्न तत्त्वों के परमाणुओं की भिन्नता भी प्रकट की है। उन्होंने कहा कि परमाणु स्वतन्त्र नहीं रह सकते तथा भिन्न पदार्थों के परमाणु आपस में संयुक्त हो सकते है।[13] वस्तुतः वेदांत के वैशेषिक दर्शन में ही परमाणुओं और तत्त्वों आदि को समझने का गंभीर प्रयास स्पष्ट रूप से किया गया है। प्राचीन भारत की धातुओं की प्रकृति को समझने एवं खनिज तथा अयस्कों से उन्हें शुद्ध अवस्था में प्राप्त करने को अत्यधिक महत्त्व दिया गया। ऋग्वैदिक काल से ही आर्यों को विभिन्न धातुओं का ज्ञान था, जिसकी पुष्टी वैदिक साहित्य से होती है। ऋग्वेद से हमें लहित् अयस व कृष्ण अयस् आदि धातुओं की जानकारी मिलती है। ऋग्वेद साहित्य की एक ऋचा में हमें इन्द्र द्वारा प्रयोग किए गए हथियार वज्र का वर्णन मिलता है जो अयस् धातु से बना है।[14] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में धातुओं, अयस्कों तथा मिश्र धातुओं के बारे में स्तब्धकारी जानकारी दी गई है। इसी में द्रवण एवं विपालन का भी वर्णन किया गया है। धातु कर्म में शुद्ध धातु की प्राप्ति के लिए फलक्स के प्रयोग द्वारा अशुद्धियों को स्लैग अथवा धातु मल अलग किया जाता था। वराहमिहिर ने वृहत संहिता में अस्त्र–शस्त्रों को बनाने के लिए अत्त्यउच्च कोटि की धातु के निर्माण के लिए लोहे के कार्बनीकरण की विधि का वर्णन किया है। स्मरणीय है कि इस प्रकार के लोहे से बनी भारतीय तलवारों की फारस आदि देशों में बहुत मांग थी।

प्राचीन काल में रसायन विधा का विकास उपयोगिक आधार पर किया गया। प्राचीन रसायन विधा आधुनिक रसायन की अग्रदूत है। संस्कृत साहित्य में रसायन विधा को रस विधा कहा गया है। रस शब्द रासायनिक प्रक्रिया में प्रयोग होता है जिसका अर्थ है पारा या पारे से बनी वस्तुएं जो की लम्बी आयु व उच्च मस्तिष्क शक्ति देने के लिए काम आती है।[15] भारतीय रसायनज्ञों को अल्फा तथा बीटा टीन का भी भेद मालूम था। प्राचीन भारतीय रसायन साहित्य में सर्वाधिक समृद्ध वर्णन मिश्र धातुओं का है। पुरात्तात्विक प्रमाण सिद्ध करते हैं कि ईसाई युग के प्रारम्भ के सैकड़ों वर्ष पहले से भारतीयों को मिश्र धातुओं का ज्ञान था। संस्कृत साहित्य में जस्त का एक नाम सुवर्णकार इसलिए है क्योंकि वह ताबें को सोने जैसी धातु पीतल में परिवर्तित कर देता है। इसी प्रकार मूर्तियों के निर्माण हेतु पंचलोहा तथा मोहरों के लिए भी कई प्रकार के विवरण संस्कृत साहित्य में उपलब्ध है। चांदी से भी कई वर्णों वाली मिश्र धातुएं बनाई जाती थी।[16] प्राचीन भारतीय साहित्य में गुप्तकाल रसायन तथा धातु विज्ञान का महत्त्वपूर्ण काल माना जाता है। वराहमिहिर विश्वकोषात्मक अभिरूचियों का वैज्ञानिक था। उसके द्वारा रचित वृहतसंहिता यथार्थ में उपयोगी ज्ञान का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। बराहमिहिर ज्योतिष, गणितज्ञ और देवयज्ञ होने के अतिरिक्त धातु विज्ञान का भी महान् ज्ञाता था। उसने तलवारों को तेज करने की प्रक्रियाएं व विधियों का वर्णन किया है। इस प्रकार प्राचीन काल से ही हमारी रसायन सम्बन्धी विरासत निश्चित रूप से बहुत बड़ी है। अनेकों रसायनिक प्रक्रियाओं के सम्पादन के लिए आवश्यक रसायन एवं अभिकर्मक वनस्पति स्रोतों से ही प्राप्त किये जाते थे।[17]

प्राचीन भारतीय साहित्य में भौतिक शास्त्र का भी महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इस सन्दर्भ में भारतीयों ने मूलभूत भौतिक राशियों के मापन के लिए उचित इकाईयों का प्रयोग किया है। इस प्रकार गति के नियम, स्थिति स्थापकता संस्कार तथा गुरुत्वाकर्षण बल आदि से भली–भाँति परिचित थे। वर्णमापी जैसे सुग्राही यंत्र का प्रयोग सूर्य के प्रकाश में स्थित रेखाओं को मापने के लिए प्रयुक्त करते थे तथा खागोलीय नक्षत्रों का भी उन्हें ज्ञान था।[18] इस प्रकार भौतिक विज्ञान, विज्ञान की वह शाखा है जिसका उद्देश्य प्राकृतिक घटनाओं के व्यवहार का भविष्य बताने की योग्यता, प्रेक्षणों एवं अनुभवों द्वारा प्रतिपादित नियम पद्धतियों की सहायता से सम्पादन करना है। भौतिक विज्ञान एक परिमाणात्मक विज्ञान

भी है। भौतिक विज्ञान की दो प्रमुख शाखाएं है प्रायोगिक एवं सैद्धान्तिक। ऋग्वेद काल से लेकर भास्कराचार्य तक ज्योतिषिय आवश्यकता के अनुरूप वैदिक यज्ञों में लम्बाई का मापन जरूरी रहा है। त्रग्वेद के पुरूष सूक्त की प्रथम ऋचा में पृथ्वी की परिधि की लम्बाई के माप का उल्लेख मिलता है।[19] सूर्य सिद्धांत के अनुसार पृथ्वी का अर्धव्यास 8000 योजन किंबा व 6400000 दण्ड़ है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में 400 ई.पू. सभी व्यवहत भार–मानकों का वर्णन मिलता है। अर्थशास्त्र के 'अध्यक्ष प्रचार' नामक खण्ड़ के 19वें अध्याय के अनुसार सर्वप्रथम कौटिल्य का वैज्ञानिक मत प्रासांगिक माना गया है जिसके आधार पर प्राचीन समय में मुद्रा व्यवहार प्रचलित रहा है। अर्थशास्त्र में वर्णन है कि घनत्व में वृद्धि से समस्त धातुओं के समान आयतन के लिए पदार्थ या मूल्य में वृद्धि होती है।[20]

वैशैषिक दर्शन के अनुसार ठोस एवं द्रवों के पतन कर्म का कारण गुरुत्व है। यह पद्धार्थ संयोग प्रयत्न, वेग का विरोध करता है। वैदिक ग्रन्थों में गुरुत्वाकर्षण के विषय में वर्णन मिलता है। प्रश्न उपनिषद में गुरुत्वाकर्षण सम्बन्धी विस्तृत जानकारी प्रस्तुत की गई है। इसी उपनिषद पर व्याख्या करते हुए शंकराचार्य लिखते है कि अगर पृथ्वी की प्रसिद्ध देवी 'अपना' को समर्थन देकर शरीर को निचे न खीचें तो यह आकाश में लटकता रह जाएगा। शंकराचार्य गुरुत्वाकर्षण बल के विषय में अच्छी तरह जानते थे। प्रश्नउपनिषद से गुरुत्वाकर्षण के विषय में 7000 वर्ष पूर्व की जानकारी मिलती है। इससे सिद्ध होता है कि भारत गुरूत्वाकर्षण के विषय में न्यूटन से 1000 वर्ष पूर्व ही भिज्ञ था।[21]

प्राचीन भारत में आयुर्वेद व चिकित्सा विज्ञान का काफी वर्णन साहित्यिक ग्रन्थों से ज्ञात होता है। मनुष्य को अपने वैयाक्तिक, कौटुम्बिक व सामाजिक कर्त्तव्य कर्मों को भली–भाँति पालन करने के लिए आवश्यक है कि उसका शरीर निरोग्य व स्वस्थ हो। इन सबके लिए चिकित्साशास्त्र का ज्ञान अति आवश्यक है।[22] शरीर रचना विज्ञान का वर्णन अथर्ववेद के अन्तर्गत मिलता है। अथर्ववेद के 10वें काण्ड के दुसरे सुक्त में शरीर के अंगों–प्रत्यंगो को गिनकर संक्षिप्त रूप से शरीर रचना विज्ञान का वर्णन मिलता है।[23] इसी सुक्त के ग्यारहवें मंन्त्र में रक्त प्रवाह का वर्णन है। अथर्ववेद के अनेक मन्त्रों में जल अर्थात 'आप' के गुणों का वर्णन किया गया है। जल में अमृत का निवास माना गया है, जिस प्रकार अमृत शारीरिक एवं मानसिक रोगों को दूर करके निरोग्यता, स्वास्थ्य, शांति व दीर्घ जीवन प्रदान करता है, उसी प्रकार शुद्ध जल के सेवन से ये लाभ प्राप्त होते हैं। जल में औषध का भी निवास है।[24] जल को उचित रूप से सेवन करने पर ऊर्जा उत्पन्न होती है। जल के माध्यम से प्राप्त की गई निरोग्यता को जल चिकित्सा कहते हैं। वेदों में सूर्य चिकित्सा पद्धति का भी वर्णन मिलता है। सूर्य की किरणों से चिकित्सा करके पीलिया व हृदय रोग का निवारण किया जा सकता है। ऋग्वेद में सूर्य को 'सप्त रश्मि' अर्थात सात किरणों वाला कहा गया है।[25]

अथर्ववेद में 'वरण' नामक औषधि का वर्णन है जो यक्षमा रोग और नींद न आने की चिकित्सा के रूप में प्रयोग होते है। 'रोहिणी' औषधि का प्रयोग तलवार आदि से कटी त्वचा, मांसपेशीयों, कटी हड्डी व नाड़ियों को जोड़ने के लिए किया जाता था। 'अपामार्ग' औषधि का उपयोग ज्यादा भूख, प्यास लगने पर किया जाता था। 'लाक्षा' का प्रयोग लाठी आदि की चोट से बने घावों को भरने के लिए किया जाता था।[26] 'दर्भ' औषधि खाने से क्रोध शान्त किया जाता था। इसी प्रकार 'पिप्पली' नामक औषधि अंगों की पीड़ा को शांत करने के लिए प्रयोग में लाई जाती थी। भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद के अन्तर्गत न केवल रोग निवारण का वर्णन है बल्कि जीवन जीने की उत्तम शैली का ज्ञान भी इसमें विद्यमान है। प्राचीन चिकित्सा ग्रन्थ 'चरक' में स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य को बनाए रखने पर विशेष बल दिया है।[27] आयुर्वेद का प्रयोजन स्वस्थ पुरूष के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी व्यक्ति के रोगों को दुर करना है। ऋतुओं के अनुसार आहार–विहार तथा मानसिक एवं शारीरिक वेगों को रोकने से व्यक्ति स्वस्थ रहता है।[28] वैदिक भारतीयों के औषधि ज्ञान के विषय में संहिताओं से पता चलता है जिनमें सिर, आँखें, कान, हृदय, पेट, त्वचा आदि के बारे में वर्णन मिलता है।[29] संहिताओं में मौसम परिवर्तन तथा शरीर में सूक्ष्म जीवाणुओं को बिमारी का कारण बताया गया है। श्रोत संहिता में शल्यचिकित्सा को आठ भागों में बांटा गया है जिसमें छेदन, भेदन, चीरण, वेघन, ऐसन, अहरान, विस्रावन व सिवाना का वर्णन मिलता है।[30] प्राचीन संस्कृत साहित्य से पता चलता है कि उस समय चिकित्सा उच्च दर्जे की थी जिससे उन लोगों ने प्लास्टिक सर्जरी को भी विकसीत कर लिया था।[31] अथर्ववेद के चतुर्थ कण्ड़ में हानिकारक रोग जन्तुओं के नियन्त्रण एवं उनके निवारण का उल्लेख मिलता है। 'अजश्रृंगी' नामक औषधि से जल तथा वायु में फैलने वाले रोगों को नियंत्रित किया जाता था। पीपल व वट वृक्षों के अतिरिक्त तुलसी व काकमची जैसे पोधों के प्रभाव से व्याधियां दुर होती थी।[32] प्राचीन काल में चरक व सुश्रुत महान् चिकित्सक थे। चरक ने सर्वप्रथम शल्य चिकित्सा को अपनाया जिसका विवरण चरक संहिता से प्राप्त होता है। सुश्रुत गुप्त कालीन महान् चिकित्सक हुए जिन्होंने विभिन्न प्रकार के रोगों के निवारण हेतु विभिन्न औषधियों की खोज की तथा मानव जीवन को सुगम बनाया।

इस प्रकार आयुर्वेद विश्व में प्रचलित सभी चिकित्सा प्रणालियों का उद्गम स्रोत है। आज दूषित पर्यावरण, कीटनाशी अवशेष युक्त भोजन तथा पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति से त्रस्त मानव जाति के लिए आयुर्वेद जैसी पद्धति अपनाने की आवश्यकता है। प्राचीन साहित्यिक ग्रन्थों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि उस समय लोग काफी कार्य कुशल थे। इसलिए वर्तमान वैज्ञानिक प्राचीन उपलब्धियों से लाभ उठाते हुए इन्हें भारतीय चिन्तन के अनुकूल बनाए जिससे प्राचीन तकनीकी विज्ञान सर्वहितकारी तथा कल्याणकारी बन सके।

सन्दर्भ सूची

1 सरस्वती, स्वामी सत्यप्रकाश, 2013, प्राक्कथन, पृ. 3
2 वही, पृ. 4
3 कुमार, एस., प्रोसेटिंग ऑवर हेरीटेज इन सांईस, 2002, पृ. 61
4 बाघेला, एच.एस., इतिहास के सिद्धान्त वं पद्धतियाँ, पृ. 41–42
5 मोहन, ब्रज, गणित का इतिहास, 1965 (प्रथम संस्करण), पृ. 40
6 राजपूत, बलवन्त सिंह, प्राचीन भारत में विज्ञान, 2002, पृ. 11
7 सेन, एस.एन., दाँ कन्साईस हिस्ट्री ऑफ साईस इन इण्ड़िया, पृ. 137
8 राजपूत, वलवन्त सिंह, वही, पृ. 11
9 वही
10 मोहन, ब्रज, पूर्वनिर्दिष्ट, पृ. 326
11 मजूमदार, रमेशचन्द्र, भारतीय जन का इतिहास, पृ. 431
12 मोहन, ब्रज, पूर्वनिर्दिष्ट, पृ. 330
13 अग्रवाल, ओम प्रभात, प्राचीन भारत में रसायन विज्ञान, 2002, पृ. 20

14 ऋग्वेद, टप्प्, 96.3
15 कुमार, समरेन्द्र, प्रीसेन्टिंग अवर हेरीटेज इन सांईस सेंटर, 2002, पृ. 11
16 मजूमदार, आर.सी., पूर्वनिर्दिष्ट, पृ. 441
17 अग्रवाल, ओम प्रभात, पूर्वनिर्दिष्ट, पृ. 23
18 डोगरे, नारायण गोपाल, प्राचीन भारत में विज्ञान, विज्ञान भारतीय, 2002, पृ. 24
19 त्रग्वेद, पुरूष सूक्त से उद्धत
20 कौटिल्य, अर्थशास्त्र, अध्याय–12, (आकारकर्मान्त प्रर्वतनम)
21 वार्टक, पदनाकर विष्णु, वेदों में विज्ञान का ज्ञान, 1995, पृ. 92, 93
22 अथर्ववेद, दसवां काण्ड, दुसरा सुक्त तथा तैतीसं मंत्र, (10/02/33)
23 वेदवाचस्पति, आचार्य प्रियवृत, वेद और उसकी वैज्ञानिकता भारतीय मनीषा के परिपेक्ष्य में, श्रद्दानन्द अनुसंधान प्रकाशन केन्द्र, 1990
24 अथर्ववेद, 1/4
25 ऋग्वेद, 5.49.9
26 अथर्ववेद, 10.3
27 अग्रवाल, एस.बी., प्राचीन भारत में आयुर्वेद विज्ञान, 2002, पृ. 45
28 चरक, संहिता अध्याय, 30, श्लोक 26
29 सेन, एस.एन., पूर्वनिर्दिष्ट, पृ. 576
30 वही, पृ. 581
31 वार्टक, पदनाकर विष्णु, वेदों में विज्ञान का ज्ञान, 1995, पृ. 105
32 आहुजा, सुभाष तथा आहूजा, उमा, प्राचीन भारत में वृक्ष चिकित्सा पद्धति, 2002, पृ. 32